ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.20, No.2, April-June, 2025/60

मौर्यकाल में भूस्वत्व व्यवस्था

अजय मिश्र एवं महेन्द्र पाठक

https://doi.org/ 10.61410/had.v20i2.241

मौर्यकाल में भी प्राचीनकाल की भाँति विद्वानों में मतभेद था कि भूमि का स्वामी कौन होगा? सामान्यतया मौर्यकाल में राजा भूमि का मात्र संरक्षक ही नहीं था, अपितु प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उस पर नियंत्रण भी रखता था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र[1] में एक अध्याय का शीर्षक' भूमिच्छिद्र विधानम्' है। इसमें वास्तु एवं कृषि योग्य भूमि के अतिरिक्त अन्य भूमि का विवेचन किया गया है। भूमिच्छिद्र भूमि वह भूमि थी, जिसमें कृषि नही हो सकती थी। इस भूमि पर राजा का अधिकार होता था, राजा जब चाहे तब उस भूमि से लोगों को हटा सकता था। इससे यह बात सिद्ध होती है कि कौटिल्य के अनुसार भूमि पर अन्तिम अधिकार राजा का था, लेकिन विनयपिटक[2] में स्पष्ट रूप से उल्लेख मिलता है कि भूखण्डों को बेचा या गिरवी रखा जा सकता था जिससे यह बात प्रमाणित होती है कि भूखण्ड पर वैयक्तिक स्वत्व था। इतिहासकार लल्लन जी गोपाल[3] का मानना है कि, सैद्धान्तिक आधार पर प्राचीनकाल से पूर्व मध्यकाल तक भूमि पर राज्य के स्वत्व को ही स्वीकार करने वाले धर्मशास्त्रकार रहे हैं। साम्राज्य की सभी वस्तुओ पर सामान्यतया राजा का ही अधिकार माना जाता हैं। काल एवं परिस्थितियो के अनुसार राजा को अपना भाग प्राप्त होता था, इसके साथ ही भूमि पर कृषक अपना अन्तिम अधिकार समझता था। कृषक भूमि का अपने अनुसार ही उपयोग करता था। इस प्रकार भूमि पर एक साथ उभय (वैयक्तिक एवं राजकीय) स्वत्व दिखाई पड़ता था। मौर्यकाल में भूस्वत्व की समस्या का विश्लेषण किया सकता हैं।

भूमि पर राजा का स्वत्व –मौर्यकाल में भूस्वत्व राजा के अधिकार में माना जाता हैं। कौटिल्य[4] ने कहा जो ''व्यक्ति खेतो में कृषि न करें, राजा उनके भूमि को जब्त कर ले।'' कौटिल्य के इस कथन से राजा के स्वत्व की बात समझ में आती है, क्योंकि भूमि को वही व्यक्ति जब्त कर सकता हैं, जिसका उस पर अधिकार होता हैं। गौतम[5] ने लिखा है कि राजा ब्राह्मण को छोड़कर राज्य की प्रत्येक वस्तु का स्वामी होता है अर्थात् भूमि पर अन्तिम अधिकार राजा का होता था। मिलिंदपन्हो[6] में उल्लिखित है कि राजा सभी नगरों, बंदरगाहो और खानों आदि का स्वामी होता था। कौटिल्य[7] के अर्थशास्त्र में यह स्पष्ट रूप से लिखा है कि जिस भूमिखण्ड के स्वामित्व के विषय में झगड़ा हो या जिस भूमिखण्ड के विषय में आपस में विवाद हो या ये निश्चय न हो पाये कि वह भूमि किसकी है, तो ऐसी भूमि पर राजा का अधिकार होता था। यदि किसी भूमिखण्ड का कोई वंशज न हो तो ऐसी भूमि का भी स्वामी राजा होता था।

गौतम[8] ने लिखा है कि राजा को भूमि का स्वामी माना जाता था, नही तो वह उपज का छठा भाग प्राप्त करने का अधिकारी किस प्रकार से हो सकता था? लेकिन उपर्युक्त उदाहरणों से यह सिद्ध नही होता कि राजा भूखण्डों का स्वामी होता था। इनसे केवल यही सिद्ध होता है कि राजा को भूराजस्व वसूलने का अधिकार प्राप्त था। राजा को सभी सम्पत्ति का अधिपति होने का मत सर्वप्रथम महाभारत[9] में उल्लेख हुआ है। मेगस्थनीज ने लिखा है कि भारत में सभी भूमि का स्वामी राजा होता

- शोध छात्र, प्रचीन इतिहास, का0सु0 साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अयोध्या।
- आचार्य महेन्द्रपाठक, अवकाश प्राप्त, का0सु0 साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अयोध्या

हैं।[10] मेगस्थनीज के आधार पर डायोडोरस और स्ट्रेबो ने लिखा है कि भारत में सभी भूमि राजा की होती थी। कोई अन्य व्यक्ति भूमि का स्वामी नहीं हो सकता था। नीलकण्ठ शास्त्री का मत है कि भूमि को नियंत्रित करने का पूरा अधिकार मौर्यकाल में राज्य को था। मनु[11] के अनुसार भूमि में दबे हुए जखीरों के आधे का स्वामी राजा होता था। विष्णु[12] के अनुसार भूमि के अन्दर दबे हुए सामग्रियों का स्वामी सदैव ही राजा होता हैं।

डायोडोरस[13] ने मेगस्थनीज के वर्णन के आधार पर लिखा है कि जब किसान अपने बैल और औजार काम में लाते थे, तब उन्हे भूराजस्व के रूप में चौथा भाग देना पड़ता था। स्ट्रेबो[14] ने भी लिखा है कि किसानों को राज्य मजदूरी के रूप में उपज का चौथाई भाग देना पड़ता था। इस प्रकार कहा जा सकता है कि ज्यादातर यूनानी लेखको का मत था कि भूमि पर राजा का स्वत्व था।

मौर्यकाल काल के अन्तर्गत कुछ विद्वानों का मत था कि समस्त भूमि पर अन्तिम अधिकार तो राजा का ही होता था, लेकिन राजा अपनी भूमि किसानों को देकर केवल उनसे भूराजस्व प्राप्त करता था। पाण्डुरंग वामन काणे[16] का मत है कि कृषि योग्य भूमि का स्वामी किसान ही होता था। राजा को उपज का कुछ भाग लेने का अधिकार था। जिस भूमि में किसान खेती नही करता था या जो भूमि ऊसर थी, उस भूमि पर राजा का अधिकार था, इस प्रकार काणे महोदय ने भी भूमि पर राजा का अन्तिम अधिकार माना है। भूस्वत्व के विषय में प्रमुख अर्थशास्त्री कौटिल्य का प्रसिद्ध कथन है कि –

''यथेष्टमनवसित भागं दधुस्यत्र कृच्छेभ्यः। स्वसेतुभ्यो हस्त प्रवर्तितमुदक भांग पंचम दधुः।

अकृषतामिच्छधान्येश्यः प्रयच्छेत। ग्रामभृतवैदेह कावा कृषेयुः अकृषन्तोऽपहींन दधुः।। [16]

अर्थात्– राजा भूराजस्व लेने के साथ जलकर लेने का भी अधिकारी था। कौटिल्य का मानना हैं कि कृषि कार्य करने के लिए कृषक को जमीन प्रदान की जाती थी। यदि वह व्यक्ति ठीक से कृषि कार्य नहीं कर पाता था, तब राजा को यह अधिकार होता था कि राजा उस व्यक्ति से भूभाग लेकर किसी अन्य व्यक्ति को दे सकता था।

स्कंदगुप्त के जूनागढ़ अभिलेख[17] से विदित होता है कि सौराष्ट्र के गिरनार नगर के पास सुदर्शन झील थी, जिसके जल का सिंचाई में उपयोग किया जाता था। इस झील का मूलतः निर्माण चन्द्रगुप्त मौर्य के शासन काल में सिंचाई हेतु किया गया था, जो कि स्थानीय नदियों तथा वर्षा के जल का बाँध बनाकर किया गया था। दूसरी सदी में रूद्रदामन के समय में यह बाँध टूट गया था, जिसका जीर्णोद्वार उसने कराया, परन्तु 5वीं सदी में स्कंदगुप्त के शासनकाल मे सुदर्शन झील निरंतर वर्षा के कारण फिर से टूट गयी। स्कंदगुप्त ने अपार धन व्यय करके इस झील का पुरार कराया।

समय–समय पर भूमि पर लगाया जाने वाला भूराजस्व, भूमि पर राजा के स्वत्व को प्रमाणित करता है। भूखण्ड से उसे छठा भाग लगातार प्राप्त होना उसके भूस्वत्व को दशार्ता हैं। आदिकाल से पूर्व मध्यकाल तक विभिन्न राज्यों ने बड़ी संख्या में भूमि विद्वानों, पुरोहितों, मठों, मन्दिरों तथा शिक्षण संस्थानों को भूदान के रूप मे दिया गया और भूदान का अधिकार उसी व्यक्ति को होता है, जिसकी भूमि होती है। इस प्रकार निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भूस्वत्व एवं भूराजस्व पर राजा का अधिकार होता था। कौटिल्य सहित भारतीय विद्वानों तथा मेगस्थनीज सहित यूनानी विद्वानों ने इसी मत को स्वीकार किया है कि भूमि पर अन्तिम अधिकार राजा का होता हैं।

वैयक्तिक स्वत्व – ऋग्वेद[18] में अपाला का अपने पिता की भूमि के सन्दर्भ में जो कथन है, वह प्राचीन काल से ही वैयक्तिक भूस्वत्व को प्रमाणित है। उत्तर वैदिक काल के वैदिक संहिता और उपनिषद ग्रंथो में वैयक्तिक भूस्वत्व की बात कही गयी हैं। भूस्वत्व के विषय में मनु[19] ने कहा है कि –

पृथोरपीमां पृथिवीं भार्या पूर्वविदो विदुः। स्थाणुच्छेदस्य केदारमाहुः शल्यवतो मृगम्।।

अर्थात् '' पुराविद् लोग इस पृथ्वी को भृगु की भार्या मानते है। मुख्य (ठूंठ) पेड़ काटकर भूमि को समतल बनाकर खेत (क्षेत्र) बनाने वाले का खेत और पहले बाण मारने वाले का मृग मानते।

भूमि पर वैयक्तिक स्वत्व को राज्य द्वारा स्वीकृति के कई प्रमाण कौटिलीय अर्थशास्त्र से प्राप्त होते हैं। उदाहरण के लिए, वहाँ यह व्यवस्था है कि यदि किसी कारणवश (यथा कर्ज आदि के बदले) कोई अन्य व्यक्ति किसी की भूमि (कर्ज चुक जाने तक) ले लेता था तो उस समय भी मूल भूस्वामी को उसके भरणपोषण हेतु उसे कुछ (लगान जैसी) वस्तु (अन्न या द्रव्य) प्रति वर्ष देनी होती थी। ऐसी दशा में अपनी भूमि पर खेती न करते हुए भी भूस्वामी भूमि के स्वत्व से हाथ नहीं धोता था। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य की अकृष्ट अथवा अपकृष्ट भूमि को स्वयं जोत–बोकर उसमें सुधार लाता था तब 5 वर्षो के बाद उस सुधार के बदले कुछ पाकर उसे मूल भूस्वामी को वह जमीन लौटा देनी होती थी।[20]यह भी कहा गया है कि देश छोड़कर चले जाने पर भी भूस्वामी का भूमि से स्वत्व समाप्त नहीं होता था।[21] परन्तु राजकीय कर आदि न चुका सकने की स्थिति में राज्य व्यक्तिगत स्वत्व की भूमि भी नीलाम करा सकता था। ऐसी स्थिति में या दान देने की स्थिति में अथवा अन्य विपत्तिमूलक और विवशता की स्थितियों में जब किसी की जमीन का हस्तान्तरण, विक्रय अथवा दूसरे के यहाँ रेहन रखना अपरिहार्य हो जाता था, तब ग्रामवृद्धों को उसकी जानकारी और तदर्थ उनकी अनुमति प्राप्त करना आवश्यक होता था। इसके अतिरिक्त राज्य शासन की जानकारी एवं उसके द्वारा इसका पंजीयन भी आवश्यक होता था। मनुस्मृति[22] में उल्लिखित है कि –

निधीनां तु पुराणानां धातुनां एवं च क्षितौ। अर्धभाग्रक्षणाद्राजा भूमेरधिपतिर्हि सः।।

अर्थात् राजा भूमिगत सभी धातुओं –द्रव्यों तथा भूमि के अन्दर दबी हुई सम्पत्तियों में आधे का इस कारण से हकदार था कि वह सम्पूर्ण भूमि का अधिपति और रक्षक था। महाभारत[23] का तो यहाँ तक कथन है कि राजा ब्राह्मणों को छोड़कर सभी की सम्पत्ति छीन सकता था। ऐसी स्थिति में यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि इन सन्दर्भों में पति, अधिपति अथवा अधिराज जैसे विशेषणों के अर्थ क्या हैं? प्रायः अधिकाशं आधुनिक विद्धानों के मत में इन शब्दों के ये तात्पर्य नहीं है कि राजा (राज्य) भूमि सहित सम्पूर्ण सम्पत्ति का स्वामी था। यह तो निर्विवाद है कि अनेक प्रकार की भूमि का एक बहुत बड़ा अंश ऐसा भी था, जिसका वह रक्षक मात्र था और उसके बदले ही वह भूमिकर (भाग) प्राप्त करता था। इसी कारण ही उसे 'षड्भागभृत' अथवा षडशंवृत्ति कहा जाता था।

कौटिल्य ने भूमि की बिक्री के संबंध के मुकदमे (वादों) में उसके स्वामी का स्पष्ट उल्लेख किया है, जिसमे कहा गया है कि एक व्यक्ति खेत के स्वामी की अनुमति के बिना अपने पशु उसके खेत में होकर निकाल रहा था।[24] कौटिल्य ने खेत को बेचने और गिरवी रखने का नियम दिया था। कौटिल्य ने यह भी कहा है कि यदि कोई व्यक्ति किसी खेत को जबरदस्ती गिरवी रख ले, तब उसके लिए भी दण्ड का विधान किया गया था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में यह भी उल्लिखित हैं कि यदि कोई व्यक्ति किसी उचित कारणवश दूसरे के खेत मे खेती कर ले तो उस स्थिति में पूर्ण विचार करके राजा

को खेती करने वाले से खेत के स्वामी को कुछ धन किराये के रूप मे दिलवाना चाहिए।[25] कौटिल्य द्वारा दिये गये तथ्यो के आधार पर कहा जा सकता है कि भूमि पर वैयक्तिक स्वत्व की व्यवस्था थी, लेकिन उस पर अन्तिम अधिकार राजा का था। हम आज के परिप्रेक्ष्य में देखते है कि सरकार हमारी जमीन को जनहित के कार्यो हेतु हमसे ले सकती है, लेकिन उसका उचित मात्रा में हमे मुआब्जा प्रदान करती हैं।

बृहस्पति[26] ने कहा है कि जिस भूमि पर किसी व्यक्ति का तीस वर्ष तक अधिकार रहा हो, वह उस भूखण्ड का स्वामी हो जाता था। नारद के अनुसार तीन पीढ़ियो तक जिस व्यक्ति का खेत पर अधिकार रहा हो, वह वैधानिक रूप से उस भूखण्ड का स्वामी हो जाता है।[27] नारद ने लिखा है यदि किसी खेत का स्वामी कहीं चला गया हो तो कोई अन्य ब्यक्ति उस खेत को जोत ले और उसी समय उस खेत का स्वामी वापस आ जाये तो फसल तैयार होने तक जितना धन दूसरे व्यक्ति ने खर्च किया हो, उतना धन देकर खेत का स्वामी अपना खेत वापस ले सकता था।[28] गौतम एवं मनु के अनुसार भूमि का स्वामी अपनी भूमि का प्रयोग अपनी इच्छानुसार कर सकता था, वह उसे बेच सकता था, दान कर सकता था तथा उसे गिरवी रख, सकता था।[29]

भूमि पर सामूहिक स्वत्व –

वैदिक काल मे देखा गया है कि भूमि पर सामूहिक स्वत्व के सन्दर्भ में उल्लेख प्राप्त होते हैं यथा उल्लिखित है कि उत्तर कुरू और अति प्राचीन काल में कुरू देश में किसी व्यक्ति की अपनी भूमि के स्वामी गांव के सभी निवासी होते थे। दीर्घनिकाय[30] में भी इसी प्रकार के समाज की परिकल्पना की गयी हैं। **आर. जी. बासक के अनुसार भूमि का स्वामी गांव होता था।** यदि राजा गांव का स्वामी होता तो उसे दान में देने के लिए प्रजा के प्रतिनिधियों की अनुमति लेने की क्यों आवश्यकता होती? परन्तु हमें यह भी ध्यान मे रखना चाहिए कि ग्राम वृद्ध भी बिना राजा की आज्ञा के कोई भी जमीन नहीं बेच सकते थे। भूखण्ड की बिक्री के लिए दोनों की सहमति आवश्यक थी। दान में देने पर भी एक अभिलेख के अनुसार ब्रिक्री के मूल्य का छठा भाग राजा को मिलना सुनिश्चित था।[31]

अर्थशास्त्र में 'भूमिच्छिद्र' भूखण्ड का उल्लेख हुआ है। कौटिल्य[32] ने 'भूमिच्छिद्र' भूमि उस भूमि को कहा है, जिस पर कृषि कार्य सुचारू ढंग से नहीं हो पाता था। इस भूमि पर कृषि करने वाले लोगों से राजा जब चाहे भूमि वापस ले सकता था। आधुनिक विचारक यू. एन0 घोषाल का मत है जैसे परती भूमि में कृषि कार्य करने वाला कृषक उस भूखण्ड का वास्तविक स्वामी हो सकता था, उसी प्रकार भूमिच्छिद्र भूमि प्राप्त करने वाला व्यक्ति भी उस भूमि का स्वामी बन जाता था।[33] विद्वानों का मत है कि छिद्र शब्द का अर्थ होता है, भूमि पर न राजा का अधिकार था न ही किसी व्यक्ति का अधिकार अपितु इस भूमि पर सभी ग्रामवासियों का अधिकार माना जाता था।

भूस्वत्व की समस्या तथा समाधान –उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भूस्वत्व की समस्या एक जटिल प्रश्न है। इस पर विद्वानों का अलग– अलग मत है। वैदिक ग्रंथ अथर्ववेद[34], तैत्तिरीय संहिता[35], छान्दोग्य उपनिषद[36] तथा बौद्धग्रंथ चुल्लवग्ग, जातक[37] तथा निकाय ग्रथों[38] में उर्वरापति, उर्वराजित, क्षेत्रसा, क्षेत्रपति, क्षेत्रसायिक तथा वत्थुपति जैसे शब्दों के सन्दर्भ प्राप्त होते है। अर्थशास्त्र[39] में राजकीय तथा वैयक्तिक का स्वत्व में आने की बात स्वीकार की गयी है। कौटिल्य का मानना है कि भूमि का स्वामी अन्तिम रूप से राजा ही हो सकता है, लेकिन विशेष परिस्थिति में वैयक्तिक स्वत्व भी हो सकता

था। हेनरीमेन[40] कृषक उल्लिखित प्रसेनजित द्वितीय के ताम्रपत्र में सामूहिक भूस्वत्व को स्वीकार करते हैं, तो संकालिया[41] ने 181 ई0 के क्षत्रप अभिलेख में सामूहिक स्वत्व की विचारधारा को सक्रिय पाते हैं।

राजा को भूमि का स्वामी प्राचीन स्मृतिकारों के साथ – साथ आधुनिक विचारकों जैसे– वी.ए. स्मिथ[42], जे. एन समद्दर[43]घोषाल[44] तथा हॉप्किन्स[45] आदि विद्वानों ने माना है, जबकि वैयक्तिगत स्वत्व को मानने वाले आधुनिक विचारक आर.एस. शर्मा[46] के.पी. जायसवाल[47], वेडेन पावेल[48] तथा लल्लन जी गोपाल[49] आदि है।

भूस्वत्व की तीनों विचारधाराओं के अध्ययन के उपरांत हमें प्राचीन काल में सामूहिक भूस्वत्व की अवधारणा दिखायी पड़ती है, परन्तु छठी शताब्दी ई0पू0 में हमें वैयक्तिक स्वत्व की अधिकता दिखाई देती है। मौर्यकाल में हमें वैयक्तिक स्वत्व के साथ ही साथ राजकीय अर्थात् भूस्वत्व पर अन्तिम अधिकार राजा का दिखाई देता हैं, लेकिन राजा प्रजा से भूराजस्व के बदले में भूमि प्रदान करता था। जब तक प्रजा कृषि कार्य करती थी, उस भूमि पर वैयक्तिक स्वत्व बना रहता था। मौर्यकाल में अशोक अपने प्रथम पृथक् शिलालेख में कहता है कि **''सभी प्रजा हमारी संतान जैसी है।''** इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए विद्वानों का मत है कि भूमि पर स्वत्व तो राजा का होता था, लेकिन राजा प्रजा हित को ध्यान में रखते हुए वह भूमि जनता को दे देता था, जिस पर बहुत कम भूराजस्व वसूल किया जाता था।

संदर्भ ग्रन्थ –

1- कौटिल्य 2, पृष्ठ – 49,50
2- विनय पिटक 2, 150, 159
3- गोपाल,एल–आस्पेक्टस ऑफ हिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर इन ऐश्यंट इण्डिया, पृष्ठ–87
4- कौटिल्य 2, 1, 10 तथा 1, 14, 3
5- गौतम 11, 1
6- मिलिंदपञहो पृष्ठ – 259
7- कौटिल्य– 3, 9
8- गौतम 11, 1
9- महाभारत 12, 77, 2
10- के. ए. एन. शास्त्री, एज ऑफ नन्दाज एंड मौर्याज़, पृष्ठ – 177
11- मनु 8, 39
12- विष्णु 3, 55
13- डायोडोरस 2, 49
14- स्ट्रेबो 15, 1, 40
15- काणे, हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, भाग –2 पृष्ठ– 868
16- कौटिलीय अर्थशास्त्र – 2.24, 2/1
17- स्कंदगुप्त का जूनागढ़ अभिलेख

18- ऋग्वेद, 1.110.5, 8.91.5 6.20.1 देखिए गोपाल हिस्ट्री अब एग्रीकल्चर इन एंशिएंट इंडिया पृष्ठ– 43–44

19- मनु0 9.44

20- अर्थशास्त्र, तृतीय, 9–10

21- अर्थशास्त्र, 3.16

22- मनुस्मृति, 8.39

23- महाभारत, शान्तिपर्व, 77.2

24- कौटिल्य 3, 10, 1

25- कौटिल्य 3, 17, 8

26- बृहस्पति, 7, 27 – 28

27- नारद 1, 91

28- नारद 11, 23– 25 उद्धृत ल0 गोपाल, उपर्युक्त, पृष्ठ–49

29- गौतम 10, 39 मनु. 8, 199

30- दीर्घनिकाय, 32, 7

31- इंडि. एंटि. 1910 पृष्ठ– 195, पृष्ठ– 12–14 धर्मादित की प्लेट–ए

32- अर्थशास्त्र – 2/2 पृष्ठ– 49/50

33- यू. एन. घोषाल एग्रेरियन सिस्टम इन ऐंश्यटइंडिया, पृष्ठ – 21

34- अथर्ववेद, 4/189/5 4/5/31.4

35- तैत्तिरीय संहिता – 2, 21, 2

36- छान्दोग्य उपनिषद 8/42–2

37- चुल्लुवग्ग 614. 9

38- दीर्घनिकाय 27/19

39- अर्थशास्त्र 3, 9, 19

40- हेनरीमेन, विलेज कम्यूनिटीज् इन ईस्ट एण्ड बेस्ट, पृष्ठ – 91 – 94

41- संकालिया,स्टडीज इन द हिस्ट्रारिकल एण्ड कल्चरल जियोग्राफी एण्ड इथिनोलॉजी ऑफ गुजरात पृष्ठ–51

42- स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया पृष्ठ– 137

43- जे. एन. समद्दर, इकोनामिक कण्डीशन्स इन ऐंश्यंट इण्डिया पृष्ठ– 168

44- यू. एन. घोषाल, का. हि. रे. सि. पृष्ठ – 168

45- हाप्किंस, इंडिया ओल्ड एण्ड – न्यू, पृष्ठ– 223

46- आर.एस. शर्मा– सांमतवाद, पृष्ठ – 139–160

47- के0पी0 जायसवाल, हिन्दू पॉलिटी, पृष्ठ– 343

48- वेडेन पावेल, इण्डिया विलेज कम्यूनिटीज, पृष्ठ– 236

49- लल्लन जी गोपाल, एग्रीकल्चरल लैण्ड इन ऐंश्यंन्ट इंडिया, पृष्ठ – 179